राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 4410/2019

रामशरण गुप्ता पुत्र श्री सूरज नारायण खंडेलवाल (गुप्ता), उम्र लगभग 56 वर्ष, निवासी 36, कनक भवन, सवाई राम सिंह रोड, जयपुर। वर्तमान पता एसबी-29, रिधराज बिल्डिंग, भवानी सिंह रोड, जयपुर (राजस्थान)-302004 ।

----अपीलार्थी/प्रत्यर्थी

बनाम

कृष्ण कुमार अग्रवाल उर्फ किशन कुमार अग्रवाल पुत्र श्री गोपाल लाल अग्रवाल, निवासी सी-19, भगत सिंह मार्ग, तिलक नगर, जयपुर।

----प्रत्यर्थी/वादी

और

एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 4606/2019

श्रीमती राधा पत्नी श्री राधामोहन, निवासी एफ-7, सुखी जीवन कॉम्प्लेक्स, अजमेर पुलिया के पास, जयपुर, वर्तमान में मैनहाउस, सरदारपटेल मार्ग, जयपुर के निवासी हैं।

----प्रत्यर्थी संख्या 1/4/गैर आवेदक-अपीलार्थी

बनाम

1. कृष्ण कुमार अग्रवाल उर्फ किशन कुमार अग्रवाल पुत्र श्री गोपाल लाल अग्रवाल, निवासी सी-19, भगत सिंह मार्ग, तिलक नगर, जयपुर।

----वादी-आवेदक-प्रत्यर्थी

2. सूरज नारायण खंडेलवाल पुत्र श्री बच्चूलाल, निवासी एफ-7, सुखी जीवन कॉम्प्लेक्स, अजमेर पुलिया के पास, जयपुर (मुकदमे की सुनवाई के दौरान मृत)।

2/1. श्रीमती रामजानकी देवी पत्नी स्व. श्री सूरज नारायण खंडेलवाल।

2/2. श्री मनमोहन पुत्र सूरज नारायण खंडेलवाल।

दोनों एफ-7, सुखी जीवन कॉम्प्लेक्स, अजमेर पुलिया के पास, जयपुर के निवासी हैं।

2/3. रामशरण पुत्र स्व. श्री सूरज नारायण खंडेलवाल, निवासी 36, कनक भवन, सवाई मानसिंह रोड, जयपुर।

2/4. श्रीमती रुक्मणी पत्नी श्री रमेश चंद्र/मोहनलाल।

2/5. लक्ष्मी पुत्री स्व. श्री सूरज नारायण।

2/6. अमन पुत्र स्व. अरुण कुमार।

2/7. सुपर्णी देवी पुत्री स्व. अरुण कुमार।

सभी निवासी एफ-7, सुखी जीवन कॉम्प्लेक्स, अजमेर पुलिया के पास, जयपुर।

----प्रोफार्मा प्रत्यर्थी/अनावेदक संख्या 1/1 से 1/3, 1/5 से 1/8

प्रत्यर्थी

अपीलार्थी(गण) की ओर से : श्री टी.सी. शर्मा एवं

श्री जी.पी. शर्मा

प्रत्यर्थी (गण) की ओर से : श्री विक्रम जोनवाल के साथ

श्री एल.एल. गुप्ता

माननीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढांड

निर्णय

निर्णय सुरक्षित करने की तारीख : **17.08.2022**

निर्णय उच्चारित करने की तारीख : **25.08.2022**

रिपोर्टेबल

नों विविध अपील में शामिल मुद्दा एक ही है, इसलिए, इस सामान्य निर्णय द्वारा दोनों पर एक साथ निर्णय लिया जा रहा है।

इन अपीलों में बदली हुई परिस्थितियों में दायर आदेश 39 नियम 1 और 2 सीपीसी के तहत दायर क्रमिक/दूसरे अस्थायी निषेधाज्ञा आवेदन पर "रेस ज्यूडिकाटा" के सिद्धांत की प्रयोज्यता के संबंध में एक झगड़ा और संक्षिप्त मुद्दा शामिल है।

सुविधा के लिए सिविल विविध के तथ्य अपील क्रमांक 4410/2019 को विचार के

लिए लिया जा रहा है।

अपीलार्थी/प्रत्यर्थी-रामशरण गुप्ता (संक्षेप में 'प्रत्यर्थी') द्वारा दायर इस अपील में चुनौती, विद्वान अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश, संख्या 2, जयपुर महानगर, जयपुर (संक्षेप में 'निचली अदालत') के न्यायालय द्वारा सिविल विविध आवेदन संख्या 38/2018 में पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 12.6.2019 को दी गई है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी/वादी (संक्षेप में 'वादी') द्वारा विशिष्ट निष्पादन के लिए दूसरे/लगातार आवेदन दायर किए गए एक मुकदमे में अस्थायी निषेधाज्ञा की अनुमति दी गई है और प्रत्यर्थी को मुकदमे के निपटान तक कोई निर्माण नहीं करने और मुकदमे की संपत्ति में कोई बदलाव नहीं करने के निर्देश जारी किए गए हैं।

मामले के तथ्य संक्षेप में यह हैं कि वादी ने वर्ष 2005 में आदेश 39 नियम 1 और 2 सीपीसी के तहत अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए एक आवेदन के साथ अनुबंध के विशिष्ट निष्पाद के लिए एक मुकदमा दायर किया था, जिसे निचले न्यायालय द्वारा 6.10.2006 के आदेश के तहत निपटाया गया था और प्रत्यर्थी की सहमति से एक सहमत आदेश पारित किया गया कि मुकदमे के निपटारे तक मुकदमे की संपत्ति को हस्तांतरित नहीं किया जाएगा। उपरोक्त के दौरान, वादी ने सीपीसी के आदेश 39 नियम 1 और 2 के तहत अस्थायी निषेधाज्ञा देने के लिए दूसरा/निरंतर आवेदन निचले न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया था कि कुछ दिन पहले प्रत्यर्थी ने मुकदमे की संपत्ति पर निर्माण शुरू कर दिया था और 3.7.2018 को जब वादी ने प्रत्यर्थी से इस तरह का निर्माण न करने के लिए कहा तो प्रत्यर्थी ने मुकदमे की संपत्ति पर अनधिकृत निर्माण को रोकने से इनकार कर दिया और वादी को इसे स्थानांतरित करने की धमकी दी। इसलिए, बदली हुई परिस्थितियों में, अस्थायी निषेधाज्ञा की मांग करने वाला दूसरा/निरंतर आवेदन इस प्रार्थना के साथ प्रस्तुत किया गया कि प्रत्यर्थी को कोई भी निर्माण न करने, विचाराधीन संपत्ति में कोई बदलाव न करने और उसे किसी को हस्तांतरित न करने का निर्देश दिया जाए, जब तक मुकदमे का निपटान न हो जाए।

प्रत्यर्थी ने अपना उत्तर प्रस्तुत किया और आवेदन के कथनों को अस्वीकार कर दिया और आपत्ति ली कि पहले अस्थायी निषेधाज्ञा आवेदन का निर्णय पक्षों की सहमति से किया गया था और यह सहमति हुई थी कि प्रत्यर्थी बिक्री नहीं करेगा और विचाराधीन संपत्ति को मुकदमे का निपटान होने तक किसी को भी हस्तांतरित नहीं करेगा। इसलिए, इन

परिस्थितियों में, अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए क्रमिक आवेदन "रेस जुडिकाटा" के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है और यह बनाए रखे जाने योग्य नहीं है। उत्तर में यह भी कहा गया कि कोई निर्माण नहीं किया जा रहा है और वादी द्वारा झूठा शपथ-पत्र प्रस्तुत किया गया है, जिसके लिए उसके विरुद्ध सी.आर.पी.सी. की धारा 340 के तहत कार्यवाही शुरू की जाए और प्रत्यर्थी ने अस्थायी निषेधाज्ञा देने के लिए लगातार आवेदन को अस्वीकार करने की प्रार्थना की।

प्रतिद्वंद्वी पक्षों की दलीलें सुनने के बाद, निचली अदालत ने प्रथम दृष्टया मामला वादी के पक्ष में पाया और बदली हुई परिस्थितियों और सुविधा के संतुलन और अपूरणीय क्षति के अन्य घटकों को ध्यान में रखते हुए, अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए दूसरे/निरंतर आवेदन की अनुमति दी। आक्षेपित आदेश में प्रत्यर्थी को मुकदमे के निपटारे तक कोई निर्माण नहीं करने और मुकदमे की संपत्ति में कोई बदलाव नहीं करने का निर्देश दिया गया है।

प्रत्यर्थी ने निचली अदालत द्वारा पारित आक्षेपित आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए इस न्यायालय के समक्ष तत्काल विविध अपील को प्राथमिकता दी है।

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता का कहना है कि निचली अदालत ने अस्थायी निषेधाज्ञा देने के लिए वादी द्वारा दायर दूसरे/लगातार आवेदन को स्वीकार करने में त्रुटि की है। अधिवक्ता का कहना है कि इससे पहले अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए पहला आवेदन दिनांक 6.10.2006 के आदेश के तहत दोनों पक्षों की सहमति से तय किया गया था और प्रत्यर्थी मुकदमे के निपटारे तक संपत्ति को बेचने या अन्यत्र निष्पादित नहीं करने पर सहमत हुआ था। अधिवक्ता का कहना है कि वादी को एक ही राहत के आधार पर लगातार आवेदन दायर करने से रोका जाना चाहिए और निरंतर आवेदन को रेस ज्यूडिकाटा के सिद्धांतों द्वारा अपास्त कर दिया जाना चाहिए। अधिवक्ता का कहना है कि निचली अदालत ने प्रत्यर्थी को कोई निर्माण न करने या मुकदमे की संपत्ति में कोई बदलाव न करने का निर्देश देकर और गलती की। अधिवक्ता का कहना है कि, यदि वादी, प्रत्यर्थी की किसी भी कार्रवाई से व्यथित था, तो वह सीपीसी नियम 4 आदेश 39 के तहत निहित उपाय का लाभ उठा सकता था, लेकिन इसका लाभ उठाने के बजाय, वादी ने सीपीसी नियम 1 एवं 2 आदेश 39 के तहत अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए दूसरा/लगातार आवेदन दायर किया, जो पोषणीय नहीं है।

अपने तर्कों के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

1. सत्यध्यान घोषाल एवं अन्य बनाम श्रीमती देवराजिन देबी एवं अन्य, एआईआर 1960 एससी 941 में रिपोर्ट किया गया;

2. राजा श्री शैलेन्द्र नारायण भांजा देव बनाम उड़ीसा राज्य, 1956 एससीआर 72 में रिपोर्ट किया गया;

3. बायरम पेस्टनजी गारीवाला बनाम यूनियन बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य, (1992) 1 एससीसी 31 में रिपोर्ट किया गया; और

4. अंबालाल साराभाई एंटरप्राइज लिमिटेड एवं अन्य बनाम के.एस. इन्फ्रास्पेस एलएलपी लिमिटेड एवं अन्य, (2020) 5 एससीसी 410 में में रिपोर्ट किया गया।

इसके विपरीत, वादी के अधिवक्ता ने दृढ़तापूर्वक आक्षेपित आदेश का बचाव किया और आग्रह किया कि इसमें किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। अधिवक्ता का कहना है कि पहला आदेश दिनांक 6.10.2006 पारित होने के बाद, प्रत्यर्थी के मन में गलत इरादे पैदा हो गए और उसने मुकदमे की संपत्ति की स्थिति को बदलने के लिए निर्माण शुरू कर दिया। इसलिए, इन परिस्थितियों में, वादी के पास अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए दूसरा/लगातार आवेदन दायर करने के अलावा कोई अन्य वैकल्पिक उपाय नहीं बचा था, जिसमें प्रत्यर्थी के विरुद्ध कोई निर्माण न करने या मुकदमे की संपत्ति में कोई बदलाव न करने के निर्देश मांगे गए थे। अधिवक्ता का कहना है कि वादी द्वारा दायर अस्थायी निषेधाज्ञा के क्रमिक आवेदन पर विचार करते समय निचली अदालत द्वारा अवैधता की गई है। अधिवक्ता का कहना है कि सीपीसी नियम 1 और 2 आदेश 39 के तहत वादी द्वारा दायर किए गए दूसरे/निरंतर आवेदन पर निचली अदालत द्वारा विचार करने के लिए 'रेस ज्यूडिकाटा' के सिद्धांतों के तहत कोई रोक नहीं है।

अपनी दलीलों के समर्थन में, अधिवक्ता ने ***अर्जुन सिंह बनाम मोहिन्द्र कुमार और अन्य एआईआर 1964 उच्चतम न्यायालय 993*** में रिपोर्ट किया गया, के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, और उसके आलोक में न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर भी भरोसा जताया है:-

1. मदन लाल खुटेटा बनाम बद्री नारायण, एआईआर 1988, राजस्थान 61 में रिपोर्ट

किया गया; और

2. 180. भूरा बनाम अपर जिला न्यायाधीश संख्या 8, जयपुर शहर एवं अन्य ने 2004 (1) डब्ल्यूएलसी (राजस्थान) 180 में रिपोर्ट किया गया।

तथ्यात्मक स्थिति में कोई विवाद नहीं है कि वादी द्वारा प्रत्यर्थी के विरुद्ध विशिष्ट निष्पादन के लिए अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए एक आवेदन के साथ मुकदमा दायर किया गया था जिसमें यह कहा गया था कि वादी 09.09.2004 को मौखिक समझौते के माध्यम से वाद की संपत्ति द्वारा प्रत्यर्थी से खरीदने के लिए सहमत थी। 11.09.2004 को इस संबंध में एक दस्तावेज निष्पादित किया गया था और उक्त समझौते के नियमों और शर्तों के अनुसार, 29.12.2004 को एक अधिवक्ता और समझौते के पक्षों के माध्यम से 1 लाख रुपये के स्टांप पर एक विक्रय-पत्र तैयार किया गया था। विक्रय-पत्र पर अपने हस्ताक्षर किए और विक्रय-पत्र को एक विशेष दिन पर पंजीकृत किया जाना था, लेकिन प्रत्यर्थी उपस्थित नहीं हुआ, इसलिए, विक्रय-पत्र निष्पादित नहीं किया जा सका। काफी प्रयास करने के बाद भी जब विक्रय-पत्र निष्पादित एवं पंजीकृत नहीं हुआ तो विशेष वाद दायर किया गया। निष्पादन के साथ-साथ अस्थायी निषेधाज्ञा का आवेदन प्रस्तुत किया गया। यह तथ्य विवादित नहीं है कि वादी एवं प्रत्यर्थी की सहमति से दिनांक 6.10.2006 को एक सहमत आदेश पारित किया गया था कि वाद के निस्तारण तक वाद की सम्पत्ति अन्यत्र नहीं की जायेगी। जब प्रत्यर्थी ने निर्माण शुरू किया और मुकदमे की संपत्ति की स्थिति को बदलना चाहा और 3.7.2018 को निर्माण गतिविधियों को रोकने से इनकार कर दिया, तो इन बदली हुई परिस्थितियों में, वादी ने अस्थायी निषेधाज्ञा की मांग करते हुए निचली अदालत के समक्ष प्रत्यर्थी के विरुद्ध लगातार आवेदन प्रस्तुत किया। दोनों पक्षों की दलीलें सुनने के बाद, निचली अदालत ने आवेदन को आंशिक रूप से स्वीकार कर लिया और प्रत्यर्थी को मुकदमे के निपटारे तक कोई निर्माण नहीं करने या वाद की संपत्ति में कोई बदलाव नहीं करने का निर्देश दिया।

दोनों पक्षों की प्रतिद्वंद्वी दलीलों को सुना और उन पर विचार किया तथा रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता द्वारा उठाई गई आपत्ति कि अस्थायी निषेधाज्ञा देने के लिए क्रमिक आवेदन विचारणीय नहीं है क्योंकि धारा 11 सीपीसी के तहत निहित 'रेस जुडिकाटा'

के सिद्धांतों द्वारा इसे वर्जित किया गया है, जो तत्काल मामले की विशिष्ट परिस्थितियों में मान्य नहीं है, क्योंकि पहला आदेश दिनांक 6.10.2006 पारित होने के बाद प्रत्यर्थी ने 3.7.2018 को मुकदमे की संपत्ति पर निर्माण शुरू कर दिया, हालांकि इस तथ्य को प्रत्यर्थी ने यह दावा करते हुए विवादित किया है कि वादी ने इसके संबंध में एक गलत शपथ-पत्र प्रस्तुत किया है। इस तथ्य को सत्यापित करने के लिए, इस न्यायालय ने दिनांक 19.12.2019 के आदेश के तहत श्री प्रांजुल चोपड़ा, अधिवक्ता को साइट का निरीक्षण करने के लिए आयुक्त नियुक्त किया, जिन्होंने 19.12.2019 को साइट का निरीक्षण किया और निरीक्षण के बाद उन्होंने इस न्यायालय के समक्ष दिनांक 20.12.2019 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि वाद की संपत्ति पर ताजा सीमेंट प्लास्टर दिखाई दे रहा था और रिपोर्ट के समर्थन में, तस्वीरें भी प्रस्तुत की गईं, जिनसे यह स्पष्ट है कि ताजा निर्माण चल रहा था। इसलिए, इन परिस्थितियों में, वादी के पास मुकदमे की संपत्ति की सुरक्षा के लिए अस्थायी निषेधाज्ञा देने के लिए सीपीसी के नियम 1 और 2 आदेश 39 तहत दूसरा/निरंतर आवेदन प्रस्तुत करने के अलावा कोई अन्य वैकल्पिक उपाय नहीं बचा था। बदली हुई परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, निचली अदालत ने प्रत्यर्थी को कोई भी निर्माण न करने और मुकदमे की संपत्ति की प्रकृति/स्थिति को न बदलने के लिए रोक लगाते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया है।

इस न्यायालय की सुविचारित राय में, अस्थायी निषेधाज्ञा का आदेश बाद में उत्पन्न होने वाली नई स्थिति के प्रथम दृष्टया प्रमाण पर बदला और परिवर्तित किया जा सकता है।

अर्जुन सिंह (सुप्रा.) मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना है कि अस्थायी निषेधाज्ञा देने के लिए दूसरा आवेदन दायर किया जा सकता है। इसे पैरा क्रमांक 13 में निम्नानुसार प्रेक्षित किया गया:-

> *"13. यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि अंतर्वर्ती आदेश विभिन्न प्रकार के होते हैं; स्थगन, निषेधाज्ञा या रिसीवर जैसे कुछ आदेशों को मुकदमे के लंबित रहने तक यथास्थिति बनाए रखने के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए तैयार किया गया है कि पक्षों को सामान्य देरी से पूर्वाग्रह न हो जो न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में आमतौर पर होती है। इस अर्थ में, वे किसी भी तरह से मुकदमे में विवाद के गुणागुण का निर्णय नहीं करते हैं और निस्संदेह, इसे आंशिक रूप से भी समाप्त नहीं*

करते हैं। ऐसे आदेश निश्चित रूप से उसी राहत के लिए बाद के अनुप्रयोगों द्वारा बदले या भिन्न किए जा सकते हैं, हालांकि आम तौर पर केवल नए तथ्यों या नई स्थितियों के प्रमाण पर जो बाद में सामने आती हैं। चूंकि वे मुकदमेबाजी के पक्षकारों के विधिक अधिकारों का उल्लंघन नहीं करते हैं, इसलिए न्यायिक निर्णय का सिद्धांत निष्कर्षों पर लागू नहीं होता है। जिस पर ये आदेश आधारित हैं, हालाँकि यदि एक बार निपटारे के बाद उसी आधार पर राहत के लिए आवेदन किए गए थे, तो न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के रूप में इसे अपास्त करना उचित होगा। ऐसे अन्य आदेश भी हैं जो अंतर्वर्ती हैं, लेकिन एक अलग श्रेणी में आएंगे। अभी जिन लोगों का उल्लेख किया गया है, उनसे अंतर इस तथ्य में निहित है कि उनका उद्देश्य यथास्थिति बनाए रखना या अंतिम निर्णय लंबित रहने तक संपत्ति को संरक्षित करना नहीं है, बल्कि मुकदमे का उचित, सुचारू, व्यवस्थित और शीघ्र निपटान सुनिश्चित करने के लिए तैयार किया गया है। वे इस अर्थ में अंतर्वर्ती हैं कि वे मुकदमे में उत्पन्न होने वाले किसी भी मामले का निर्णय नहीं करते हैं, न ही मुकदमेबाजी को समाप्त करते हैं। ओ.IX आर 7 के तहत एक आवेदन का मामला इस प्रकार का एक उदाहरण होगा। यदि उस नियम के प्रावधानों के तहत किया गया कोई आवेदन अपास्त कर दिया जाता है और उस मुकदमे में डिक्री के विरुद्ध अपील दायर की गई थी जिसमें ऐसा आवेदन किया गया था, तो इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि कार्यवाही को फिर से शुरू करने और इनकार करने से इनकार करने वाले आदेश की औचित्य पक्ष को पहले चरण में धकेलने के लिए अपील में प्रचार किया जा सकता है और अपीलीय अदालत द्वारा निपटाया जा सकता है। उस अर्थ में, प्रत्यर्थी को "मामले को पीछे ले जाने" की अनुमति देने से न्यायालय का इनकार अंतिम रूप नहीं लेता है। लेकिन हमारी चिंता थोड़ी अलग है और वह यह है कि क्या वही न्यायालय बाद के चरणों में उस आदेश से बंधा हुआ है, ताकि उस पर पुनर्विचार करने से रोका जा सके। यहां तक कि अगर पुनर्निर्णय का नियम लागू नहीं होता है, तो इसका मतलब यह नहीं होगा

कि हर अगले दिन जिस दिन मुकदमा आगे की सुनवाई के लिए स्थगित किया जाता है, याचिका को दोहराया जा सकता है और समान तथ्यों के आधार पर नए आदेश मांगे जा सकते हैं। यह सिद्धांत कि समान तथ्यों के आधार पर बार-बार आवेदन करने और समान राहत मांगने पर अदालत द्वारा अनुमति नहीं दी जा सकती है, हालांकि जरूरी नहीं कि यह रिज्यूडिकाटा के सिद्धांत पर आधारित हो। इस प्रकार यदि किसी मुकदमे के स्थगन का आवेदन अस्वीकार कर दिया जाता है, उसी उद्देश्य के लिए बाद में दिया गया आवेदन, भले ही समान तथ्यों पर आधारित हो, न्यायिक निर्णय के किसी भी नियम के आवेदन पर वर्जित नहीं है, लेकिन उसी आधार पर अपास्त कर दिया जाएगा जिस आधार पर मूल आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया था। निर्णय के नियम और इस आधार पर अस्वीकृति के बीच अंतर करने वाला सिद्धांत कि किसी भिन्न आदेश को उचित ठहराने के लिए कोई नया तथ्य नहीं जोड़ा गया है, महत्वपूर्ण है। यदि पुनर्न्याय का सिद्धांत तथ्य के किसी विशेष मुद्दे पर निर्णय पर लागू होता है, भले ही नए तथ्य न्यायालय के समक्ष रखे गए हों, तो रोक जारी रहेगी और मुद्दे की नई जांच को रोक दिया जाएगा, जबकि दूसरे मामले में, नए तथ्यों के साक्ष्य पर, न्यायालय सक्षम होगी, बल्कि उन पर विचार करने और न्यायालय के सामने लाए गए नए तथ्यों के अनुरूप आदेश देने के लिए बाध्य होगी।"

मदन लाल खुटेटा (सुप्रा.) और ***भूरा (सुप्रा.)*** के मामले में इस न्यायालय ने समान दृष्टिकोण अपनाया है कि यदि बदली हुई परिस्थितियों में अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए क्रमिक आवेदन स्वीकार कर लिया जाता है तो कोई त्रुटि नहीं होती है और 'रेस ज्यूडिकाटा' का सिद्धांत ऐसे मामलों में लागू नहीं होता है।

राजा श्री शैलेन्द्र नारायण भांजा देव (सुप्रा.), बायरम पेस्टनजी गारीवाला (सुप्रा.) और अंबालाल साराभाई एंटरप्राइज लिमिटेड और अन्य (सुप्रा.) के मामलों में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होते हैं क्योंकि ये सभी निर्णय 'रेस ज्यूडिकाटा' या अधिकारों की छूट के मुद्दे से संबंधित हैं जब अंतिम निर्णय और डिक्री पक्षों और उनकी सहमति के आधार पर पारित

किए गए थे और अंततः उनके अधिकारों पर न्यायनिर्णयन दिया गया। जबकि मौजूदा मामले में अस्थायी निषेधाज्ञा के पहले आवेदन पर सहमति से निर्णय लिया गया था। पक्षों का कहना है कि प्रत्यर्थी मुकदमे की संपत्ति को बेचेगा या उसमें बदलाव नहीं करेगा, इस प्रकार, अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए पहले के आवेदन को गुणागुण के आधार पर तय नहीं किया जा सकता है। अब जब प्रत्यर्थी ने निर्माण शुरू कर दिया और मुकदमे की संपत्ति की प्रकृति/स्थिति को बदलना चाहा, तो बदली हुई परिस्थितियों में दूसरा/क्रमिक आवेदन प्रस्तुत किया गया। इसलिए, यह 'रेस जुडिकाटा' के सिद्धांतों द्वारा वर्जित नहीं है।

वर्तमान मामले के दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि निचली अदालत ने क्षेत्राधिकार पर अपने विवेक का प्रयोग मनमाने ढंग से या कल्पनात्मक तरीके से किया है। आक्षेपित आदेश को विकृत नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह किसी गंभीर अवैधता या क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि से ग्रस्त नहीं है।

इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि अस्थायी निषेधाज्ञा देना या अस्वीकार करना प्रथम दृष्टया न्यायालय के विवेकाधिकार के अंतर्गत है और आम तौर पर अपीलीय अदालत से अपने दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित करने की अपेक्षा नहीं की जाती है। अपीलीय अदालत निचली अदालत द्वारा पारित आदेश में बहुत अच्छी तरह से हस्तक्षेप कर सकता है यदि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि लागू किया गया आदेश विकृत है या अस्थायी निषेधाज्ञा के प्रांत को नियंत्रित करने वाले ठोस विधिक सिद्धांतों का उल्लंघन करता है।

इस न्यायालय ने ***विमला देवी बनाम जंग बहादुर [एआईआर 1977 (राजस्थान) 196]*** के मामले में अस्थायी निषेधाज्ञा देने के मामले में विवेकाधीन आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए अपीलीय अदालत की शक्तियों की जांच की है और पाया है:

> *"मैंने प्रत्यर्थी-याचिकाकर्ता की ओर से उठाए गए तर्कों पर ईमानदारी से विचार किया है। अस्थायी निषेधाज्ञा से इनकार करने वाला आदेश एक विवेकाधीन चरित्र का है। आम तौर पर अपीलीय अदालत ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित विवेक के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं करेगी और इसके स्थान पर अपने विवेक को प्रतिस्थापित करेगी। हालाँकि, विवेकाधीन आदेश में हस्तक्षेप उचित हो सकता है यदि निचली अदालत मनमाने ढंग से या विकृत रूप से, मनमौजी तरीके से या ठोस विधिक सिद्धांतों की अवहेलना*

करती है या सभी प्रासंगिक रिकॉर्डों पर विचार किए बिना कार्य करती है।

उपरोक्त टिप्पणियों के आलोक में, मुझे अब यह देखना है कि क्या विद्वान जिला न्यायाधीश के लिए विद्वान ट्रायल कोर्ट के आदेश में हस्तक्षेप करना खुला था। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि अस्थायी निषेधाज्ञा देना एक विवेकाधीन आदेश है और मूसा बनाम बद्री प्रसाद, आईएलआर (1953) 3 राजस्थान 257 के तहत अपीलीय अदालत द्वारा पहले न्यायालय के निर्णय में आसानी से हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। समान तथ्यों और साक्ष्यों पर अपीलीय अदालत का अलग निष्कर्ष पर आना भी वजीर सुंदर सिंह बनाम एमएसटी फरीदा खानम, एआईआर 1920 पीसी 132 के मामले में हस्तक्षेप को उचित नहीं ठहराएगा। ओ. 39, आरआर 1 और 2, सीपीसी के तहत आवेदन का निपटान करते समय एक और अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत यह है कि जब न्यायालय अस्थायी निषेधाज्ञा देने के मामले से निपटते समय प्रथम दृष्टया मामले के प्रश्न का निर्णय करता है, तो उसे अपने न्यायिक दिमाग को उन सामग्रियों पर लागू करना चाहिए जो रिकॉर्ड पर रखी गई हैं और यदि वह ऐसा नहीं करता है तो यह अवैधता करता है क्षेत्राधिकार का प्रयोग और उस मामले में उच्च न्यायालय मूसा बनाम बद्री प्रसाद (सुप्रा.) के तहत ऐसे मामले में पुनरीक्षण में हस्तक्षेप करने के लिए सक्षम है। मूसा बनाम बद्री प्रसाद (सुप्रा.) में अपनाए गए दृष्टिकोण का पालन गिरधारी लाल बनाम महादेवी शर्मा, एआईआर 1958 राजस्थान 237 में कान सिंह जे द्वारा किया गया है। इस मामले में यह माना गया है कि अपीलीय अदालत को अस्थायी निषेधाज्ञा देने से संबंधित किसी मामले में ट्रायल कोर्ट का निर्णय को प्रभावित करने में धीमा होना चाहिए, जब तक कि ट्रायल कोर्ट का निर्णय मनमाना, विकृत या ठोस विधिक सिद्धांतों पर आधारित न हो। उस मामले में आगे देखा गया है कि जब अपीलीय अदालत अपने न्यायिक विवेक का उपयोग नहीं करता है, रिकॉर्ड पर लाई गई सभी सामग्रियों पर, उस स्थिति में अपीलीय अदालत का दृष्टिकोण गलत होगा और उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित

अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांतों के विपरीत होगा, खासकर तब जब अपीलीय अदालत प्रचलित तर्क से निपटती नहीं है तथा ट्रायल कोर्ट के साथ और आगे जब यह रिकॉर्ड पर रखी गई सामग्रियों पर अपना न्यायिक विवेक लागू नहीं करता है।"

बाद के निर्णय में, उच्चतम न्यायालय ने ***वंडर लिमिटेड और अन्य बनाम एंटॉक्स इंडिया पी. लिमिटेड [1990 (पूरक) एससीसी 727]*** के मामले में देखा कि अस्थायी निषेधाज्ञा के अनुदान या इनकार के विरुद्ध अपील सिद्धांत पर अपील है। अपीलीय अदालत की शक्तियों का विस्तार करते हुए, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया:

"ऐसी अपीलों में, अपीलीय अदालत प्रथम दृष्टया न्यायालय के विवेक के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं करेगी और अपने विवेक को प्रतिस्थापित नहीं करेगी, सिवाय इसके कि जहां विवेक का प्रयोग मनमाने ढंग से, या मनमाने ढंग से या विकृत तरीके से किया गया हो या जहां न्यायालय ने अंतर्वर्ती निषेधाज्ञा के अनुदान या इनकार को विनियमित करने वाले कानून के स्थापित सिद्धांत के तहत इसे नजरअंदाज किया हो जहां विवेक के प्रयोग के विरुद्ध अपील को सिद्धांत पर अपील की गई है। अपीलीय अदालत सामग्री का पुनर्मूल्यांकन नहीं करेगी और निचली अदालत द्वारा पहुंचाए गए निष्कर्ष से भिन्न निष्कर्ष पर पहुंचने की कोशिश करेगी, यदि उस न्यायालय तक पहुंचा गया मामला विषय-वस्तु पर उचित रूप से संभव था। अपीलीय अदालत को आम तौर पर केवल इस आधार पर अपील के तहत विवेक के प्रयोग में हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा कि यदि उसने मुकदमे के चरण में मामले पर विचार किया होता तो यह एक विपरीत निष्कर्ष पर आ गया होता। यदि ट्रायल कोर्ट द्वारा विवेक का प्रयोग उचित रूप से और न्यायिक तरीके से किया गया है, तो यह तथ्य कि अपीलीय अदालत ने एक अलग दृष्टिकोण अपनाया होगा, ट्रायल कोर्ट के विवेक के प्रयोग में हस्तक्षेप को उचित नहीं ठहराया जा सकता है।"

इसके अलावा, प्रथम दृष्टया मामले के अतिरिक्त, इस पर भी विचार करना आवश्यक है कि यदि मुकदमे के दौरान अस्थायी निषेधाज्ञा के माध्यम से उसे रोका जाता है तो पक्ष

को किस प्रकार की हानि या चोट या पूर्वाग्रह होगा। वर्तमान मामले में, ट्रायल कोर्ट ने इस घटक पर भी विचार किया है और देखा है कि सुविधा का संतुलन वादी के पक्ष में झुकता है और यदि अस्थायी निषेधाज्ञा नहीं दी जाती है, तो वादी को ही अपूरणीय क्षति हो सकती है, प्रत्यर्थी को नहीं। प्रत्यर्थी यह मामला नहीं बना सके कि निचली अदालत द्वारा पारित निषेधाज्ञा आदेश से उन्हें कोई गंभीर हानि या चोट या पूर्वाग्रह होगा।

माननीय उच्चतम न्यायालय ने ***महरवाल खेवाजी ट्रस्ट (पंजीकृत) फरीदकोट बनाम बलदेव दास (2004) 8 एससीसी 488*** में रिपोर्ट किया गया, के मामले में सीपीसी नियम 1 और 2 आदेश 39 के तहत अस्थायी निषेधाज्ञा देने के संबंध में कानून का एक सिद्धांत प्रतिपादित किया है और उसका कहना है कि जब तक मुकदमे के किसी पक्ष द्वारा अपूरणीय हानि या क्षति का मामला नहीं बनता है, तब तक न्यायालय को संपत्ति की प्रकृति को बदलने की अनुमति नहीं देनी चाहिए जिसमें संपत्ति का हस्तांतरण भी शामिल है जिससे उस पक्ष को नुकसान या क्षति हो सकती है जिसके लिए ऐसा किया जा रहा है जो अंततः सफल हो सकता है और कार्यवाही की बहुलता को जन्म दे सकता है। ***देव प्रकाश एवं अन्य बनाम इंद्र और अन्य(2018) 14 एससीसी 292*** में प्रकाशित मामले में उक्त सिद्धांत का आगे पालन किया गया है जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने देखा कि किसी भी संपत्ति से जुड़े नागरिक मुकदमे के लंबित होने के दौरान अस्थायी निषेधाज्ञा और रिसीवरशिप की अवधारणा का सार किसी भी व्यक्ति द्वारा इसके खतरे की बर्बादी, क्षति और अलगाव को रोकना है। उसके पक्ष में, अथाह पूर्वाग्रह के लिए दूसरे पक्ष के लिए या स्थिति को अपरिवर्तनीय बनाने के लिए न केवल अंतिम निर्णय पर प्रभाव डालने के लिए बल्कि दी गई राहत को भी भ्रामक बनाने के लिए। माननीय उच्चतम न्यायालय ने कहा कि न्यायिक विवेक को न्यायिक नैतिकता द्वारा अनुशासित किया जाना चाहिए और किसी भी तरह से अनियंत्रित यंत्र की तरह व्यवहार नहीं करना चाहिए।

उपरोक्त निर्णयों के बाद, इस न्यायालय ने ***रुद्रेश झुनझुनवाला और अन्य बनाम सतीश कुमार एवं अन्य 2022 (2) डीएनजे (राजस्थान), 797*** में रिपोर्ट किया गया, के मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि अस्थायी निषेधाज्ञा आदेश में हस्तक्षेप केवल उस स्थिति में किया जा सकता है, जहां अपीलीय अदालत संतुष्ट है कि निचली अदालत ने मनमाने ढंग से या विधि के विपरीत कार्य किया है अथवा यह कि निचली अदालत के निष्कर्ष विकृत या गलत हैं।

मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और विषय पर कानून को ध्यान में रखते हुए, मेरी राय में, निचली अदालत ने अपने विवेक का विवेकपूर्ण ढंग से प्रयोग किया है। इसलिए, मैं निचली अदालत द्वारा पारित विवेकाधीन आदेश में हस्तक्षेप करने में अनिच्छुक महसूस करता हूं।

नतीजतन, दोनों अपीलें विफल हो गई हैं और उन्हें अपास्त कर दिया गया है।

स्थगन आवेदन और सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हों, भी अपास्त कर दिए जाते हैं।

हालाँकि, मामले पर विराम देने से पहले, यह देखा जा सकता है कि मामले में शामिल तथ्यों पर विचार करते हुए, निचली अदालत से मुख्य मुकदमों की सुनवाई में तेजी लाने और जल्द से जल्द निर्णय करने की उम्मीद की जाती है, जो कि इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तारीख से एक वर्ष की अवधि से अधिक नहीं होगी।

रजिस्ट्री को इस आदेश की एक प्रति संबंधित केस फ़ाइल में रखने का निर्देश दिया गया है।

(अनूप कुमार ढांड), न्यायमूर्ति

Sharma NK/42-43

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है ,जिसे फर्म के निदेशक डॉ .वी .के .अग्रवाल ,द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए ,निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।